नेहरू बाल पुस्तकालय

अभिमान की हार

योगेंद्रनाथ शर्मा 'अरुण'

चित्रांकन
फजरूद्दीन

nbt.india
एकः सूते सकलम्
राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
NATIONAL BOOK TRUST, INDIA
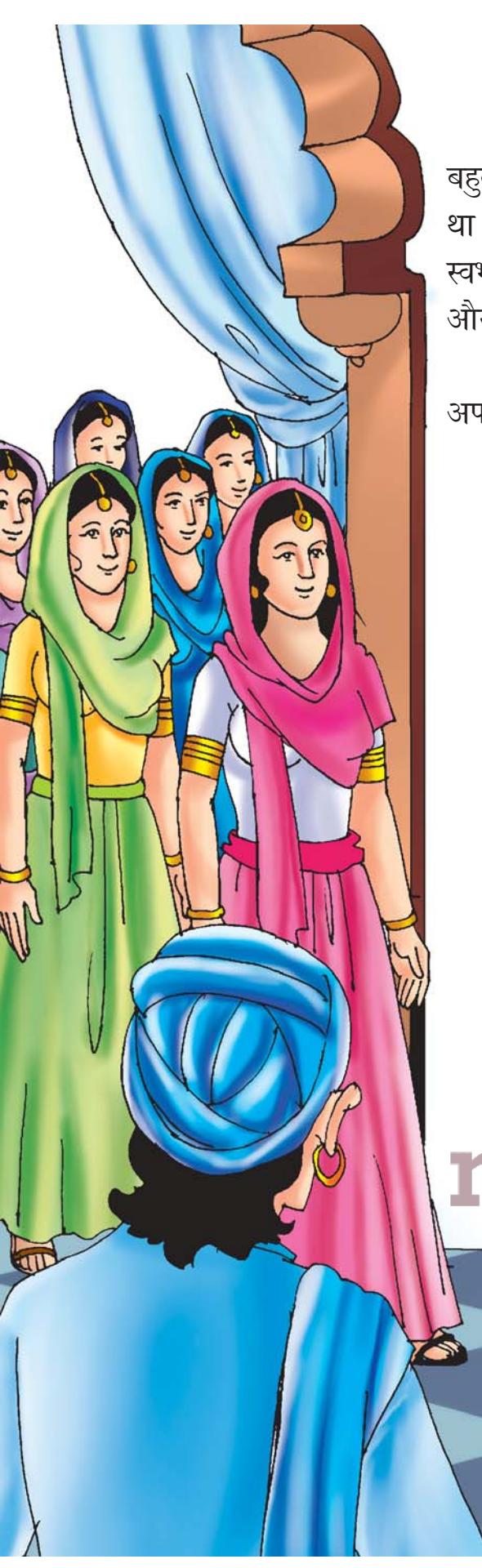
बहुत समय पहले की बात है। महाराज नन्द का राज्य था। राजा नन्द के महामंत्री शकटार बहुत उदार स्वभाव के थे। सारा राज्य महामंत्री शकटार की बुद्धिमत्ता और चतुराई का लोहा मानता था।

राजा नन्द तो राज्य का हर छोटा-बड़ा निर्णय अपने कुशल महामंत्री शकटार की सलाह से ही लिया

करते थे। सब महामंत्री का मन से सम्मान करते थे। महामंत्री जहां राज्य के हर मामले में गहरी पहुंच रखते थे, वहीं वे गुणशाली व्यक्तियों का बहुत आदर करते थे।

महामंत्री शकटार के दो पुत्र स्थूलभद्र और श्रीयक थे। यक्ष, यक्षदिन्ना आदि नाम की सात पुत्रियां महामंत्री की थीं। ये सातों पुत्रियां तीव्र स्मरण शक्ति की धनी थीं। ईश्वर का चमत्कार था कि किसी भी व्यक्ति द्वारा कही गई बात को एक पुत्री पहली बार सुनकर कंठस्थ कर लेती थी। दूसरी पुत्री किसी बात को सुनकर ज्यों का त्यों दोहरा देती थी। इसी प्रकार तीसरी पुत्री तीन बार, चौथी पुत्री चार बार तथा इसी क्रम से सातवीं पुत्री सात बार सुनकर किसी भी बात को वैसा ही दोहरा सकती थी।

राजा नन्द के दरबार में कवि वररुचि भी थे। वे बड़े प्रतिभाशाली कवि थे। उन्हें राजा ने प्रसन्न होकर 'कवि सम्राट' की उपाधि दे दी थी।

कवि वररुचि विद्वान तो थे ही, लेकिन अभिमानी भी बहुत थे। अपने कवित्व के घमंड में वे छोटे कवियों को जब चाहे, अपमानित कर देते थे लेकिन राजा नन्द के कृपा-पात्र होने के कारण उन्हें कोई कुछ कह नहीं पाता था।

सच्चाई यह थी कि महामंत्री शकटार ही कवि वररुचि की प्रतिभा देखकर दरबार में लाए थे। शकटार वह दिन नहीं भूलते, जिस दिन वररुचि ने महामंत्री के कहने पर राजा नन्द के दरबार में पहुंचकर अपने बनाए एक सौ आठ श्लोक सुनाए थे।

महामंत्री शकटार ने सहज गुणग्राहक होने के कारण कवि वररुचि की भूरि-भूरि प्रशंसा भरे दरबार में कर दी। राजा नन्द तो महामंत्री पर अटूट विश्वास रखते थे। परिणाम यह हुआ कि राजा नन्द ने प्रसन्न होकर कवि वररुचि को एक सौ आठ सोने की मुद्राएं देकर राजकवि बना दिया।

वररुचि अभिमानी तो थे ही। गुणग्राहक मंत्री का उपकार न मानकर, उल्टे घमण्डी हो गए। उनको लगा कि मैं तो कवियों का सिरमौर हूं। मेरे रहते किसी की क्या मजाल कि राजा के सामने आकर कविता सुना सके।

अभिमानी वररुचि के मन में लालच जाग उठा। वे यह भूल गए कि राजा नन्द तो महामंत्री शकटार द्वारा की गई वररुचि की प्रशंसा के कारण प्रभावित हुआ था।

वररुचि ने सोचा कि जो राजा एक श्लोक पर एक सोने की मुद्रा देता है, उसे क्यों न मैं प्रतिदिन एक सौ आठ श्लोक सुनाकर मुद्राएं लेता रहूं? लालची कवि वररुचि के मन में खुशी की लहर दौड़ने लगी।

वररुचि प्रतिदिन राजा नन्द को एक सौ आठ श्लोक सुनाकर एक सौ आठ स्वर्ण मुद्राएं लेने लगा। दरबार का हर आदमी यही सोचता था कि वररुचि की तो किस्मत ही खुल गई है। उधर कवि का अभिमान दिनोंदिन और बढ़ने लगा था।

महामंत्री शकटार ने एक दिन अपने मन में सोचा कि मुझसे भावुकता में बहुत बड़ी भूल हो गई है। राजा नन्द तो मेरी सहज भाव से की गई वररुचि की प्रशंसा को उसकी प्रतिभा का प्रमाण समझ कर रोज-रोज राजकोष से एक सौ आठ स्वर्ण मुद्राएं लुटाते जा रहे हैं। शकटार ने विचार किया कि राजकोष पर तो प्रजा का अधिकार होता है। राजकोष पर ही तो राजा का भविष्य टिका हुआ है।

मुसीबत यही थी कि अब किस मुंह से राजा नन्द को महामंत्री बताएं कि कवि वररुचि बहुत अभिमानी और लालची हैं?

महामंत्री कई दिन तक सोचते रहे, सोचते रहे।

अनायास उन्हें एक उपाय सूझ गया। वे राजा नन्द के राजमहल में पहुंचे और आदरपूर्वक बोले—''महाराज! आपकी उदारता का पूरे राज्य में डंका बज रहा है। मैं बहुत प्रसन्न हूं लेकिन...।'' महामंत्री बीच में ही रुक गए।

''लेकिन क्या? महामंत्री शकटार! आप रुक क्यों गए?'' राजा नन्द ने उत्सुकतापूर्वक महामंत्री से पूछा।

''क्षमा करें, महाराज! कवि-सम्राट वररुचि को प्रतिदिन आप जो एक सौ आठ स्वर्ण मुद्राएं देते हैं, क्या वह उचित है?'' महामंत्री ने कहा, तो राजा नन्द बोल पड़े—''वाह, महामंत्री शकटार! स्वयं ही तो आपने वररुचि की प्रशंसा की थी। हमें स्वयं देना होता तो हम उसे पहले ही दे देते। केवल आपके कारण हम उसका सम्मान करते हैं।''

''मैं धन्य हूं महाराज! आपने मेरी प्रशंसा का मान रक्खा है, लेकिन महाराज! अब

कवि वररुचि आपको पुराने श्लोक सुनाते हैं।'' महामंत्री ने राजा नन्द को बताया। राजा नन्द बोले—''यदि ऐसा है तो आप कल दरबार में सबके सामने प्रमाण दे दें, तब हम अपना निर्णय बदल देंगे।''

अगले दिन महामंत्री राज-दरबार में अपनी सातों पुत्रियों को ले गए। कोई भी महामंत्री की योजना नहीं जान सका।

राजा नन्द दरबार में पहुंचे।

कवि-सम्राट वररुचि राजा को रोज की तरह अपने श्लोक सुनाने लगे। जैसी आदत थी कवि वररुचि की, उसी के अनुसार श्लोक सुनाकर अभिमान में भरकर उन्होंने विजयी की तरह महामंत्री शकटार की ओर देखा।

महामंत्री खड़े हुए और हाथ जोड़कर बोले—''महाराज की जय हो! आज कवि-सम्राट ने जो श्लोक सुनाएं हैं, वे तो कई बार सुने हुए पुराने श्लोक हैं?

''कौन मूर्ख कहता है कि ये श्लोक पुराने हैं। मैं भरे दरबार में महामंत्री शकटार को चुनौती देता हूं कि वे अपने कथन का प्रमाण दें अन्यथा महाराज उन्हें दंडित करें।'' बेहद गुस्से में तिलमिलाते अभिमानी वररुचि ने चुनौती दे दी।

पूरे दरबार में सन्नाटा छा गया।

महामंत्री ने खड़े होकर अपनी पहली पुत्री को संकेत किया, ''क्या तुमने ये पहले सुने हैं पुत्री?''

''जी हां! पिताश्री! अभी जो श्लोक कविवर ने सुनाए हैं, वे तो मैंने सुन रक्खे हैं।'' यह कहकर पुत्री ने श्लोक दोहरा दिए। तब महामंत्री ने दूसरी पुत्री से भी यही सवाल पूछा—''पुत्री! क्या तुमने भी कविश्रेष्ठ वररुचि द्वारा सुनाए गए श्लोकों को पहले सुना है?'' दूसरी पुत्री ने भी ''जी हां, पिताश्री'' कहकर श्लोक दोहरा दिए।

महामंत्री शकटार ने क्रम से तीसरी, चौथी, पांचवी, छठी और सातवीं पुत्री को बुलाकर भरे दरबार में जब वररुचि के श्लोक ज्यों के त्यों दोहरवा दिए, तो राजा नन्द कवि-सम्राट वररुचि पर क्रुद्ध हुए। राजा ने वररुचि को स्वर्ण मुद्राएं देनी बन्द कर दीं।

वररुचि का अभिमान विकराल क्रोध में बदल गया। अपने ऊपर उपकार करने वाले महामंत्री का उपकार मानने के स्थान पर वररुचि ने मन-ही मन राजा नन्द और महामंत्री शकटार को मजा चखाने का निश्चय कर लिया।

अभिमान आदमी की बुद्धि खराब कर देता है। वररुचि का सारा ध्यान इस तरफ लग गया कि कैसे जनमानस पर अपना प्रभाव डाल कर राजा नन्द और महामंत्री शकटार को नीचा दिखाया जाए।

कवि वररुचि ने आखिर एक योजना बना ही डाली।

प्रातःकाल वररुचि गंगा में स्नान करने गया और उसने वहां आए प्रजाजनों को सुना-सुनाकर ऊंचे स्वर में गंगा के बीच में कमर तक पानी में खड़े होकर, गंगा-स्तुति के श्लोक गाना आरम्भ कर दिया।
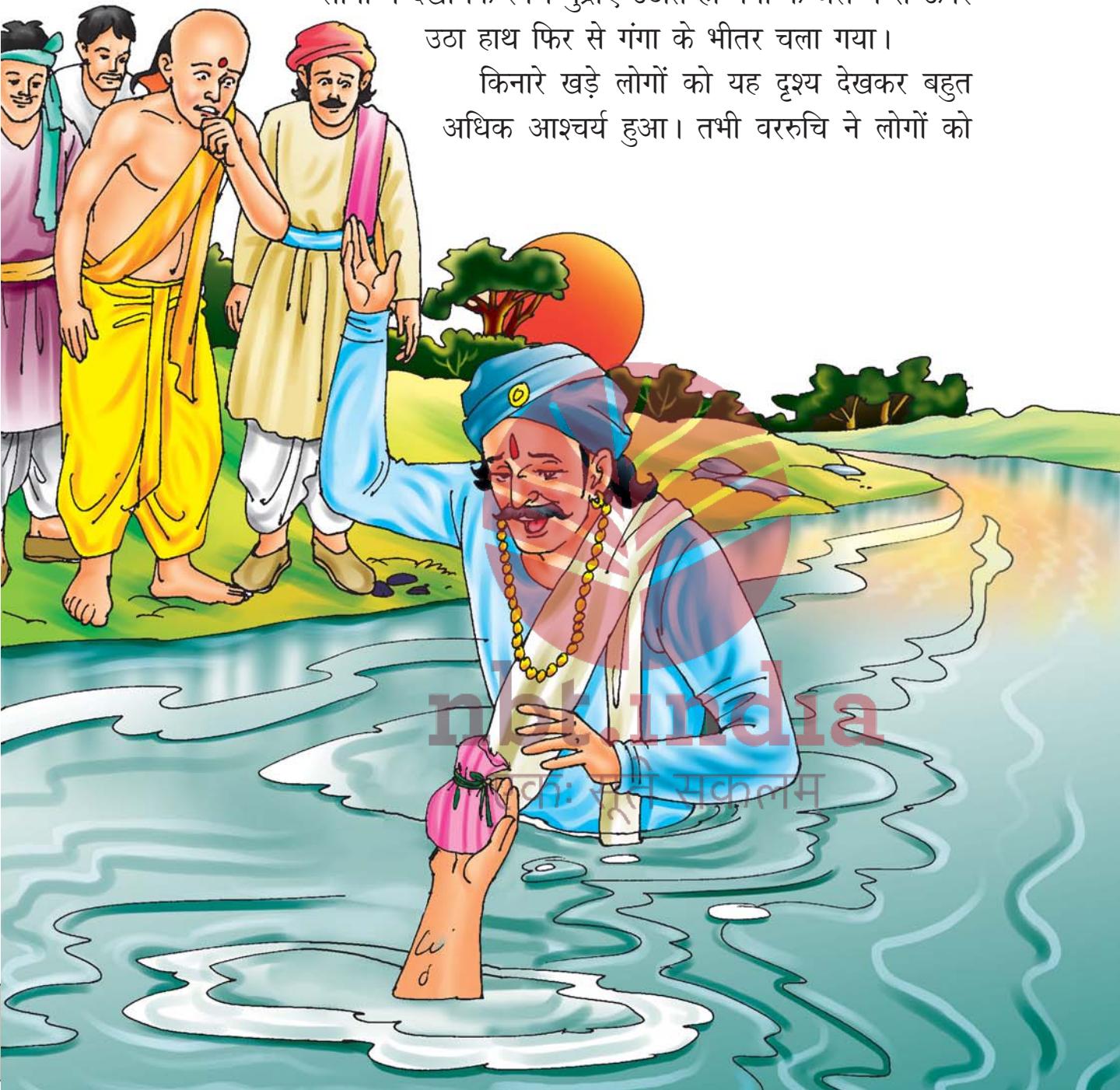
धीरे-धीरे गंगा-स्नान के लिए आए प्रजाजनों की अच्छी खासी भीड़ इकट्ठी हो गई। वररुचि जोर-जोर से गंगा की स्तुति करता रहा।

तभी किनारे खड़ी भीड़ ने विचित्र नजारा देखा। स्तुति समाप्त होते ही गंगा के जल में से निकल कर एक हाथ ऊपर आया। प्रजाजनों ने देखा कि उस हाथ पर एक सौ आठ स्वर्ण मुद्राएं रक्खी हुई हैं। वररुचि ने ऊंचे स्वर में गंगा की 'जय' बोलते हुए वे सारी स्वर्ण मुद्राएं उठा लीं।

लोगों ने देखा कि स्वर्ण मुद्राएं उठाते ही गंगा के जल में से ऊपर उठा हाथ फिर से गंगा के भीतर चला गया।

किनारे खड़े लोगों को यह दृश्य देखकर बहुत अधिक आश्चर्य हुआ। तभी वररुचि ने लोगों को

सम्बोधित करते हुए ऊंचे स्वर में कहना शुरू किया—"देखिए, देखिए भद्रपुरुषो! राजा नन्द भले ही मेरी प्रतिभा से प्रसन्न नहीं है लेकिन गंगा मैया तो मेरी भक्ति से बहुत प्रसन्न हैं। देखिए, गंगा मैया ने आप सभी के सामने प्रसन्न होकर मुझे ये सारी स्वर्ण मुद्राएं स्वयं ही दी हैं।"

लोगों ने "गंगा मैया की जय" और "गंगा मैया के भक्त कवि वररुचि की जय" कह-कह कर अपनी खुशी प्रकट की।

उस भीड़ में चालाकी से वररुचि ने अपने ही कुछ आदमियों को शामिल कर दिया था। उन्होंने कुछ प्रजाजनों को उकसाया—''भाइयो! महामंत्री कवि सम्राट वररुचि से जलते हैं, चलिए, हम सब महाराज नन्द को कवि वररुचि के इस चमत्कार की खबर बता दें।''

वररुचि के आदमी अन्य नगरवासियों के साथ महाराज नन्द के पास पहुंचे। सबने बढ़ा-चढ़ा कर कवि वररुचि के द्वारा स्तुति करने पर स्वयं गंगा मैया द्वारा स्वर्ण मुद्राएं आशीर्वाद के रूप में देने की घटना राजा नन्द को बता दी।

राजा नन्द आश्चर्य में डूब गए। उन्होंने तुरन्त दूत को भेजकर महामंत्री शकटार को बुलाया। सारी बात बताकर राजा नन्द ने महामंत्री के साथ अगले दिन प्रातः स्वयं गंगा के किनारे जाकर वररुचि की गंगा-भक्ति का चमत्कार देखने की इच्छा प्रकट की। महामंत्री ने तुरन्त अपनी सहमति दे दी।
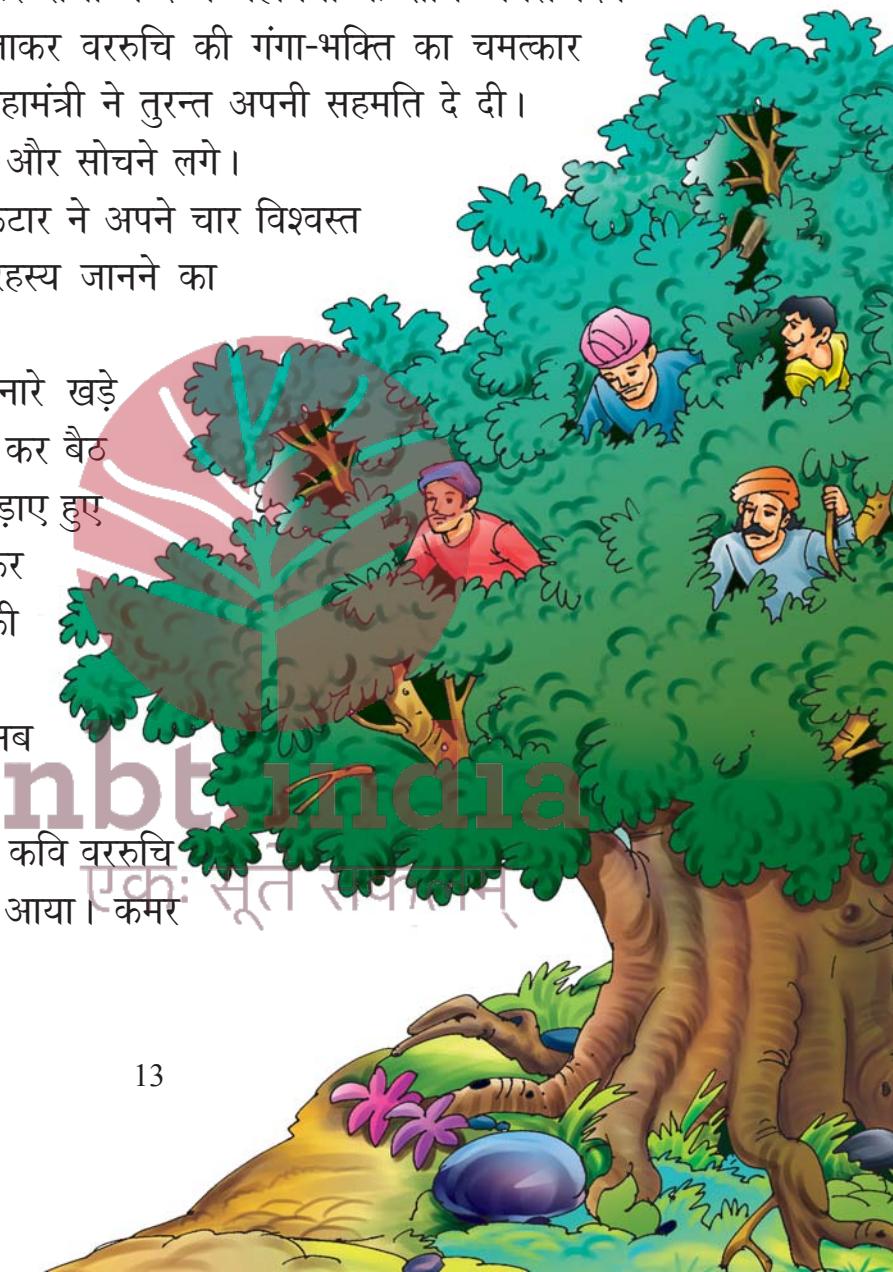
महामंत्री शकटार घर लौटे और सोचने लगे।

शाम होते ही महामंत्री शकटार ने अपने चार विश्वस्त गुप्तचरों को सारी बात का रहस्य जानने का निर्देश दिया।

गुप्तचर चुपचाप गंगा किनारे खड़े हुए एक विशाल वृक्ष पर छिप कर बैठ गए। वे उस स्थान पर नजर गड़ाए हुए बैठे थे, जहां जल में खड़े होकर वररुचि ने गंगा की स्तुति की थी।

आधी रात होने को आई। सब तरफ गहरा सन्नाटा था।

गुप्तचरों ने सहसा देखा कि कवि वररुचि चोरों की तरह गंगा तट पर आया। कमर

तक जल में जाकर उसने गंगा के जल में कोई वस्तु रख दी। फिर बाहर आकर चारों तरफ बड़े ध्यान से देखा और चुपचाप लौट गया।

अब महामंत्री के गुप्तचर पेड़ से उतरे। गंगा-जल में हाथ डालकर देखा तो वहां से एक यंत्र उन्हें मिल गया। उसी यंत्र में एक हाथ बना हुआ था, जिसमें वररुचि खुद ही एक सौ आठ मुद्राएं रखकर लौट गया था।

गुप्तचरों ने सारी मुद्राएं उठा लीं और यंत्र को उसी तरह गंगा जल में रखकर लौट आए। महामंत्री को गुप्तचरों ने वररुचि की सारी चालाकी बताई और उसके द्वारा रक्खी गई स्वर्ण मुद्राएं दे दीं।

महामंत्री शकटार उसके बाद निश्चिन्त होकर अपने शयनकक्ष में सोने चले गए।

प्रातःकाल सेवक ने महामंत्री को बताया कि राजा नन्द ने शकटार को राजमहल में बुलाया है। महामंत्री शकटार प्रसन्न मन से महाराज नन्द के राजमहल में पहुंच गए।

राजा नन्द महामंत्री के साथ गंगा-तट पहुंचे।

राजा नन्द के साथ महामंत्री शकटार और हजारों प्रजाजनों की भीड़ गंगा तट पर जमा हो गई। कवि वररुचि भीड़ को देख कर बहुत प्रसन्न हुए। मन ही मन वररुचि सोच रहे थे कि आज सबके सामने राजा नन्द मेरे श्लोकों का चमत्कार देखकर अवश्य प्रभावित होंगे।

महामंत्री शकटार चुप थे। मुस्कान उनके मुख पर थी। बहुत ही भक्ति भाव से वररुचि ऊंचे स्वर में गंगा की स्तुति के श्लोक, कमर तक जल में खड़े होकर, पढ़ रहे थे। तट पर उनके लोग 'वररुचि की जय' का उद्घोष कर रहे थे।

वररुचि की गंगा-स्तुति पूरी हो गई।

गंगा-तट पर खड़ा जन-समूह सांस रोके हुए जल के भीतर से गंगा मैया के हाथ निकलने का दृश्य देखने को उत्सुक था।

वररुचि ने पैर से यंत्र का खटका दबा दिया।
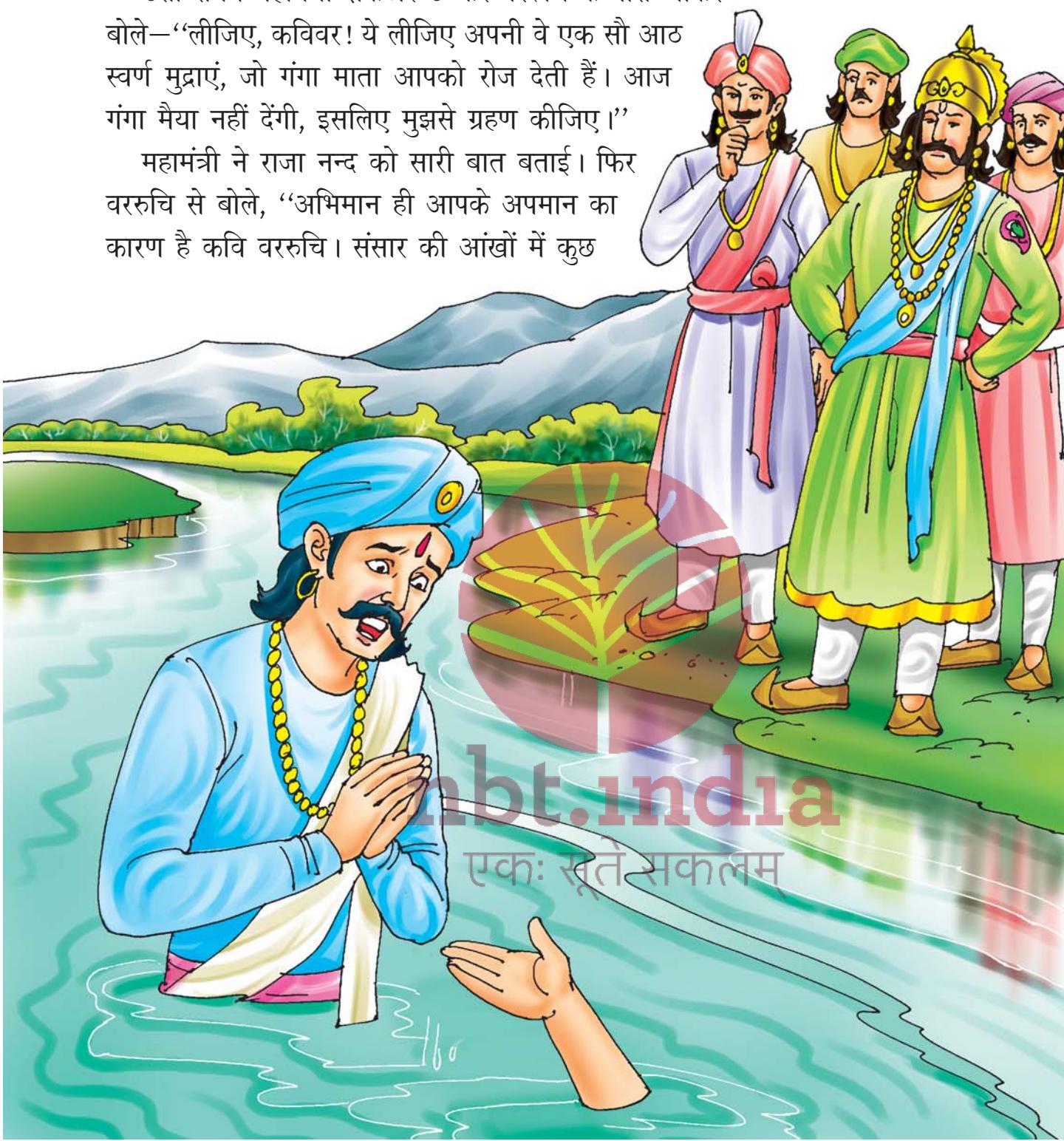
गंगा जल में से हाथ तो बाहर आया, लेकिन उस हाथ में स्वर्ण मुद्राएं तो थी ही

नहीं। गंगा-तट पर खड़ी भीड़ में हलचल मच गई। परेशान से वररुचि ने फिर से खटका दबाया, फिर से हाथ बाहर आया लेकिन फिर से खाली ही था।

वररुचि लज्जा से सिर झुकाए खड़ा सोच रहा था।

उसी समय महामंत्री शकटार उठकर वररुचि के पास आकर बोले—''लीजिए, कविवर! ये लीजिए अपनी वे एक सौ आठ स्वर्ण मुद्राएं, जो गंगा माता आपको रोज देती हैं। आज गंगा मैया नहीं देंगी, इसलिए मुझसे ग्रहण कीजिए।''

महामंत्री ने राजा नन्द को सारी बात बताई। फिर वररुचि से बोले, ''अभिमान ही आपके अपमान का कारण है कवि वररुचि। संसार की आंखों में कुछ

दिन तक भले ही कोई धूल झोंक ले, किन्तु सदा ही धोखा नहीं दिया जा सकता।''

वररुचि लज्जित हुआ। प्रजाजन कवि को धिक्कारने लगे।

महामंत्री ने सबको शांत करते हुए कहा—''आज यहां 'अभिमान की हार' हुई है। वररुचि तो उत्कृष्ट कवि हैं, बस अभिमान और क्रोध के कारण वे भटक गए थे।''

राजा नन्द ने महामंत्री के कहने पर कवि वररुचि को क्षमा कर दिया।